ISSN: 2393-8900 IMPACT FACTOR : 1.9152(UIF) VOLUME - 4 | ISSUE - 10 | JUNE - 2018

HISTORICITY RESEARCH JOURNAL

त्यौहारों को सौन्दर्य प्रदान करती उत्तराखण्ड की महिलाएँ

दीपिका रौतेला
शोध छात्रा (इतिहास विभाग)
राजकीय स्नातकोतर महाविद्यालय रामनगर उत्तराखण्ड .

शोध सांराश -

उत्तराखण्ड की संस्कृति, सभ्यता युगो -युगो से महान रही है! इसे महान स्वरूप प्रदान करने में पुरूषों के साथ स्त्रियों की भी समान रूप से भागीदारी है। सामाजिक जीवन में त्यौहारों की महत्वपूर्ण भूमिका है और अधिकतर देखा जाता है कि इसे मातृसत्तात्मक समाज बहुत बेहतरीन तरीके से बनाता व निभाता है। चूंकि उत्तराखण्ड एक हिमालयी राज्य हैं अत: पर्यटन क्षेत्र के रूप में विकसित करने में त्यौहारो आदि का भी महत्वपूर्ण योगदान हैं अनेक प्रकार के तीज त्यौहार के प्रकार महत्व आदि हम विस्तृत रूप से इस शोध पत्र में अध्ययन करेंगे।

मुख्य बिन्दु - त्यौहार, महिलाऐं , संस्कृति, सभ्यता, प्रभाव.

उत्तराखण्ड हिमालय सदैव से अपनी ऊँची विशाल चोटियों के लिए संसार भर में सर्वविदित है लेकिन क्या यह वाकई मे मात्र चोटियों का सौन्दर्य है जो हम सभी को इसकी ओर आकर्षित करता है शायद नहीं अपितु यह उस संस्कृति का भी सौन्दर्य है जिसने सौन्दर्य के नये–नये प्रतिमानों को इसके साये में रहकर गढा है।

उत्तराखण्ड हिमालयी राज्य जो कि हिमालय पर्वत श्रृंखलाओ के मध्य स्थित है। इसकी स्थापना भारत के 27वें राज्य के रूप में 9 नवम्बर 2000 को हुई। उत्तराखण्ड में कुल 13 जिले है। 6 जिले कुमाऊॅ मण्डल में, और 7 जिले गढ़वाल मण्डल मे। गढ़वाल तथा कुमाऊॅ मण्डलो को अपने अंक मे समेटे हुए आदिशक्ति पार्वती की जन्मभूमि उत्तराखण्ड प्रागैतिहासिक काल से ही ऋषि मुनियो की तपोभूमि रही है। उत्तराखण्ड का प्रथम उल्लेख हमें ऋग्वेद से प्राप्त होता है, जिसमें इस क्षेत्र को देवभूमि एंव मनीषियों की पुण्य भूमि कहा गया है वेदों के अलावा इसका उल्लेख उपनिषदो, ब्राहमण ग्रंथों, पुराणो, रामायण तथा महाभारत आदि धार्मिक ग्रंथो से भी प्राप्त होता है। इन ग्रंथो में इस क्षेत्र को पुण्य भूमि, ऋषि भूमि तथा पवित्र क्षेत्र कहा गया है। स्कन्दपुराण में भी इसका उल्लेख प्राप्त होता है, मायाक्षेत्र हरिद्वार से हिमालय तक के विस्तृत क्षेत्र को केदारखण्ड गढ़वाल क्षेत्र तथा नन्दादेवी पर्वत से कालगिरि तक के क्षेत्र को मानसखण्ड वर्तमान कुमाऊॅ क्षेत्र कहा गया है। उत्तराखण्ड की आध्यात्मिक सांस्कृतिक एंव पौराणिक महत्ता की भॉति यहॉ का इतिहास भी मानव सभ्यताओ के विकास का साक्षी है।

सरल शब्दों में सौन्दर्य से तात्पर्य आत्मीय सुख से है यह जितना बाहर सुखद लगता है उससे कहीं अधिक हमारे भीतर। यह वह आनन्द है जिसे हम अपने भीतर तक महसूस करते है और आनन्दित होते है। किसी सुन्दर वस्तु को देखकर हमारे मन मे जो आनन्ददायिनी अनुभूति होती है उसके स्वभाव और स्वरूप का

विवेचन तथा जीवन की अन्यान्य अनुभूतियों के साथ उसका समन्वय स्थापित करना इसका मुख्य उद्देश्य होता हैं।[1] इस सौन्दर्य की अनुभुति मात्र चेहरों में नहीं होती है अपितु हम इसे मूल्यों में, विचारों में और संस्कृति के विभिन्न अगेां में भी अनुभव कर सकते है। उत्तराखण्ड की संस्कृति जो विराट भारतीय संस्कृति की ही एक छोटी प्रादेशिक संस्कृति हैं हर पल हमे स्वयं पर गर्व करना सिखाती है। साथ ही यह हमारे आसपास एक ऐसे परिवेश का अनुभव कराती है जिसमें हम स्वंत्रत्र है अपने भावों की अभिव्यक्ति देने के लिए।

नारी प्रकृति का सुंदरतम उपहार हैं नारी सृष्टि का आधार होने के कारण उसे विधाता की अद्वितीय रचना कहा जाता है नारी समाज, संस्कृति और साहित्य का महत्वपूर्ण अंग हैं मानवीय गुणों की दृष्टि से विचार किया जाये तो नारी अधिक मानवीय है।[2] करूणा, दया, प्रेम, अपनत्व इन सभी भावों के मानवीय गुणों को उसी ने चरितार्थ किया है। उत्तराखण्ड की संस्कृति, रीति–रिवाज, परंपराओं को और अधिक सौन्दर्यवान बनाने का श्रेय काफी हद तक उसे जाता है। संस्कृति और उसके सौन्दर्य के विषय मे सोचने पर सदैव पहाड़ की उस महिला का चित्र रहरहकर आँखों के समक्ष उमड़ कर आ जाता है जिसमें वह अपनी पारम्परिक वेशभूषा डौटी(रंगाली पिछौड़ा) ओढे हुए, बडी सी झूलती हुई नथ के साथ नाक से माथे तक लंबा टीका लगाये हुए पूरे आभूषणों से सजी, सोलह श्रृगार को साकार करती हुई समूह में झोड़ा चाचरी करती हुई तो कभी खेतों मे रोपाई लगाते हुए हुडकियाँ बौल गाते नजर आती है कभी त्योहारों में लजीज पकवान बनाते तो कभी परिवार की सुख समृद्वि के लिए व्रत उपासना करती नजर आती है उसका संस्कृति के प्रति हर पल वह स्नेह जिसे वह कोई जोर–जबरदस्ती से नही अपितु अपनी इच्छा से अभिव्यक्त करती है हर पल संस्कृति के प्रति असके अगाध प्रेम को बयाँ करता है।

उत्तराखण्ड में जनजीवन की संस्कृति का आधार यहाँ आयोजित होने वाले मेले, पर्व तथा त्यौहार एवं लोक आयोजन है। यहाँ के निवासियों ने प्रकृति के उग्र तथा उदार रूप दोनों के मध्य स्थिति प्रज्ञ होकर सहज जीवन जिया है।[3] उत्तराखण्ड त्यौहारों, व्रत उत्सवों मे यहाँ की संस्कृति के सौन्दर्य की झलक देखने को मिलती है हमारे त्योहार लोकोत्सवों में सबसे अधिक प्रिय है। तिथिवार मनाये जाने के कारण इन्हें त्यौहार कहा जाता है जिन तिथियों में स्नानादि कम सम्पन्न होते है वे पर्व कहलाते हैं, जिन दिनों मे आमोद–प्रमोद व हर्षोल्लास का समावेश होता है वे उत्सव कहे जाते है, जिनमे उपवास रखकर नियम–संयम से भगवत पूजा की जाती है उन्हें व्रत कहा जाता है। कुमाँऊ में जो भी व्रत उत्सव ,पर्व आदि मनाये जाते है इन्हें 'त्यार' और गढवाल में 'त्यूआर' कहा जाता हैं।[4] उत्तराखण्ड मे बडे उल्लास के साथ अनेक पर्व और त्यौहार मनाये जाते है वे जनमानस को प्रभावित करने वाली प्रकृति से स्थानीय उत्सव इस अर्थ में पूरे आंचलिक ऋतूओं के परिवर्तन के साथ आत्मसात होकर जुडते है।[5] यहाँ त्यौहारों तथा पर्वोत्सवों का लोक संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान है, जितना उत्तराखण्ड के लोग अपने जीविका के साधनों के लिए संघर्षरत रहते है, उतने ही आनन्दित व उत्साहित लोकसंस्कृति सम्बन्धी कर्मकाण्डों, त्योहारों, पर्वोत्सवों के लिए। प्रकृति के बदलते रूपों से जुडे इन आंचलिक पर्वो की अपनी एक अलग पहचान है।

उत्तराखण्ड की महिलाएँ जिस प्रेम और स्नेह के साथ अपने त्योहारों के साथ जुडी हुई है। यह वाकई में संस्कृति के प्रति उसके स्नेह व लगाव को प्रदर्शित करता है। कई ऐसे त्यौहार है जिनमें यहाँ की महिलाओं की विशिष्ट भूमिका नजर आती है। जैसे–दीपावली, होली, बिरूड़ पंचमी (सांतू–आंठू) मकर संक्रान्ति (घुघुतिया), बसंत पंचमी,फूलदेई, नन्दा अष्टमी, रक्षाबन्धन, दुतिया (भैया दूज) पूर्णिमा, वटसावित्री व्रत, करवाचौथ आदि, इन त्यौहारो के आने पर घर की साफ–सफाई से लेकर साजो सज्जा का कार्य वह सहर्ष करती है त्योहार से जुडी हुई सारी सामग्री की व्यवस्था उसके द्वारा की जाती है त्योहार मात्र उल्लास या आन्नद का पर्व नही रह गये अपितु उसने स्वादिष्ट लजीज भिन्न–भिन्न पकवानों का भी इसे पर्याय बना दिया है। इन त्योहारों के लिए वह सदैव उत्साह व आनन्द से परिपूर्ण रहती हैं वैसे तो प्रत्येक त्यौहारो में महिलाओं की भूमिका रहती है परंतु फिर भी कुछ ऐसे त्योहार है जिसमें उसकी विशिष्ट भूमिका रहती है। जिनका उल्लेख निम्नलिखित रूप से किया जा रहा है। –

भिटौली–

भिटौली उत्तराखण्ड की विवाहिता महिलाओं के लिए सबसे विशेष त्यौहार है। भिटोली का अर्थ है –भेंट जो विवाहिता बहन या बेटी को चैत्र मास में मायके की ओर से दी जाती है जिसका वह बेसब्री से इंतजार

करती है यह इंतजार अपने माता–पिता या भाई से मिलने का तथा उस अपनत्व का भी होता है जो उसे भेंट के रूप में प्रमुख रूप से खाद्यान (पूरी,खजूरे) और वस्त्रादि की होती है इसके अतिरिक्त बेटी के दूर होने पर यह भेट पैसों के रूप में भेज दी जाती है। भिटौली का यह त्योहार पिता–पुत्री, माँ–पुत्री व भाई–बहन के अटूट प्रेम व बंधन को दर्शाता है इसके पश्चात गाँवों में पूरी, खजूरो और या फिर मिठाई इत्यादि पूरे आस–पडोस में भिटौली आने पर बेटी द्वारा बाँटी जाती है।

रक्षाबंधन–

भाई–बहन के एक दूसरे के प्रति अपनत्व का त्योहार ही रक्षाबंधन का त्यौहार है इस दिन बहन अपने भाई की कलाई पर राखी बाँधती है और भाई बहन को रक्षावचन देता है और साथ में उपहार भेंट करता है। बहन द्वारा भाई को बाँधी जाने वाली राखी का पर्याय अपनी सुरक्षा से अधिक भाई के प्रति प्रेम, उसकी सफलता ,सुख,समृद्वि व लम्बी आयु की कामना से होता है। विवाहिता बहनें इस दिन भाई को राखी बाँधने मायके जाती है या फिर भाई बहनों के ससुराल में आते है। यह त्यौहार भाई बहन के अटूट प्रेम को दर्शाता है।

दुर्गाष्टमी या आठू –

यह विशेषकर स्त्रियों का ही त्यौहार है क्योकि अधिकांशतः इस त्यौहार को स्त्रियाँ ही मनाती नजर आती है। भादौ की शुक्ल पक्ष की अष्टमी को महिलाए दुर्गा देवी की पूजा –अर्चना करती है और व्रत रखती है। कुमाऊँ में महिलाओं द्वारा धान–मक्के के पेडों के शिव व गौरा दोनों देवी देवता बनायें जाते है। जिन्हें भली प्रकार वस्त्र आभूषण पहनाये जाते है। इन्हें गंवार कहा जाता है। महिलाओं द्वारा शिव –पार्वती सम्बन्धी गीत या शकुन आखर गाये जाते है ढोल नगाडों के साथ दोनो का स्वागत किया जाता है। महिलाओं द्वारा अपने क्षेत्र के नजदीकी मंदिरों तक इनकी यात्रा भी निकाली जाती है। इस दिन बिरूड एक दिन पहले से भिगोकर अगले दिन माँ पार्वती और शिव को चढ़ाये जाते है फिर उसके पश्चात परिवार व आस पड़ोस मे एक दूसरे को। इस दिन विवाहित स्त्रियाँ व लडकियाँ गले में एक डोरी पहनती है जिसे दुबड़ कहा जाता है और विवाहित महिलाएँ ऐसी ही एक डोरी बाजू में भी पहनती है यह यहाँ की महिलाओं द्वारा गौरा–शिव को समर्पित त्यौहार है।

दुर्गापूजा–

दुर्गापूजा का त्यौहार वर्ष में दो बार मनाया जाता है। प्रथम चैत्र मास के शुक्ल पक्ष के नौ दिनों तक जिसके पहले दिन हिन्दुओं का नव वर्ष माना जाता है और द्वितीय दुर्गापूजा का त्यौहार आश्विन मास में मनाया जाता हैं इस दिन पहाड़ में हरेला बोने का रिवाज भी है नवरात्र के पहले दिन लकडी या धातु के चौड़े बर्तन में मिट्टी बिछाकर उसमे पंच अनाज की दानें बोकर हरेला उगाया जाता है। दशमी के दिन हरेला काटा जाता है और घर के बडो के द्वारा इसे चढ.ाया जाता है और आशीष वचन दिये जाते है। इन नौ दिनों तक माँ दुर्गा की पूजा की जाती है और व्रत रखा जाता है । नवमी के दिन कन्यापूजन किया जाता है जिनमें छोटी कन्याओं को भोग लगाया जाता है व देवी के रूप में उनकी पूजा अर्चना की जाती है । यह त्यौहार बिना कन्या पूजन के अपूर्ण माना जाता है । यह त्यौहार उसकी दैवीयता ,पराकाष्ठा और शक्ति के रूप में उसके अस्तित्व को प्रदर्शित करता है, और उसे इस धरती में सबसे पूज्य बनाता है।

दीपावली –

सम्पूर्ण भारत की ही तरह उत्तराखण्ड में भी दीपावली कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष अमावस्या को बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है । इस दिन महिलाओ द्वारा घर आँगन साफ कर देहली पर ऐपण ,व आँगन में रंगोली बनायी जाती है, साथ ही लक्ष्मी के पद्चिहन भी अंकित किये जाते है जो घर के आंगन से लेकर मंदिर तक बनाये जाते है। संध्या को महिलाओं द्वारा माँ लक्ष्मी की प्रतिमा बनाकर उनकी पूजा की जाती है। विवाहित महिलाएं पूरा श्रृंगार करके पिछौड़ा ओढ़कर माँ लक्ष्मी की पूजा करती है और घर, आंगन ओखल ,चाक आदि स्थानों पर दीपक जलाती है, घर की महिलाओं द्वारा यह करना शुभ माना जाता है। श्री राम के 14 वर्ष के वनवास के पश्चात् अयोध्या आगमन पर यह त्यौहार मनाया जाता है ।

दुतिया–

इस त्यौहार को भैया दूज के नाम से भी जाना जाता है । कार्तिक मास की शुल्क पक्ष द्वितीया को यह त्यौहार मनाया जाता है। दीपावली के प्रथम दिन या उससे पहले घर की महिलाओं द्वारा एक बर्तन में धान भिगोये जाते है, उसके पश्चात् इन्हें ओखल में कूट लिया जाता है, और फिर उसे साफ करने के पश्चात् भैया दूज के दिन इन 'च्यूडो' (कूटे धान) को बहन द्वारा भाई के पैर, घुटनों, कन्धों व सिर पर रखकर उसकी पूजा की जाती है और उसके लिए मंगल कामना की जाती है ,वह दूब के तिनकों से भाई के सिर पर तेल लगाती है और तिलक करती है और बदले में भाई उसे भेंट स्वरूप उपहार या धन आदि देता है। यह भी बहन का अपने भाई के प्रति स्नेह का त्यौहार है।

होली–

फाल्गुन की पूर्णिमा के दिन समस्त उत्तराखण्ड में होली का त्यौहार हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। रंग और गुलाल से होली खेली जाती है। इस दिन महिलाँए घरों में बैठकी होली या खड़ी होली का आयोजन करती है। जिनमे सर्वप्रथम विघ्न–विनाशक सिद्विदायक गणपति की स्तुति इस गीत द्वारा की जाती है, जिसके बोल है '' **तुम सिद्वि करो महाराज होलिन के दिन में** ' इसके बाद चीर बन्धन से सम्बन्धित गीत '**को बांधे चीर कै रघुनन्दन** ' जैसी पेक्तियों का गान किया जाता है। फिर होली गीत गाये जाते हैं जैसे –' **कृष्ण मुरारी के दर्शन का' जब विप्र सुदामा आये हरि** ' और अन्त में जिस घर में यह आयोजन किया जा रहा होता है उसके सभी सदस्यों की दीर्घायु एवं मंगलकामना के साथ इसकी समाप्ति की जाती है। इस गीत के बोल है **'साँवरी रंग डारो भिगावन को, केसरी रंग डारो भिगावन को**,' जिस घर में इस होली का आयोजन किया जाता है वंहा घर की महिलाओ द्वारा पुरूषों की वेशभूषा पहनकर तरह–तरह के स्वांग भी किये जाते है। इनमें वह पुरूषों को लक्ष्य करके उनकी ठिठाई लगाती है, उनका परिहास करती है। होली में महिलाएं गुझिया तथा अन्य प्रकार के पकवान भी बनाया करती है।

वटसावित्री –

यह सुहागिन स्त्रियो द्वारा पति की लम्बी आयु तथा पुत्र – पौत्रादि की कामना से किया जाने वाला व्रत है जो ज्येष्ठ मास की अमावस्या को किया जाता है यह व्रत भारतीय पतिव्रता नारियों की आदर्श सत्यवान की पत्नी सावित्री की पुण्य स्मृति मे आजन्म सौभाग्य के लिए उसका आशीर्वाद प्राप्त करने के निमित किया जाता है । इसके व्रतविधान के अनुसार वटवृक्ष के पास जाकर सत्यवान एवं सावित्री की मूर्ति बनाकर व्रत के संकल्प के साथ उसकी पूजा अर्चना की जाती है। इसे वट सावित्री कहने का आधार यह माना जाता कि पौराणिक गाथा के अनुसार सत्यवान ने वटवृक्ष की छाया का आश्रय लिया था, भविष्योत्तर पुराण में इसे ब्रहमसावित्री तथा व्रतकालविवेक मे 'महासावित्री ' भी कहा गया है।[6]

करवाचौथ–

यह व्रत पति तथा सन्तति की दीर्घायु के लिए महिलाओं द्वारा किया जाता है। यह निर्जल व्रत होता है, इस दिन महिलाएं पूर्ण रूप से गहने, वस्त्रादि से सजधज कर पूजा अर्चनाकरती हैं और सायंकाल को चन्द्रोदय होने पर उसका पूजन करने के उपरान्त ही पति के द्वारा जल ग्रहण करती है और उसके पश्चात अन्न। यह वत्र उत्तखण्ड मे पहले अधिक प्रचलित नही था लेकिन वर्तमान समय में संस्कृतिकरण के कारण अत्यधिक प्रचलित होने लगा है।

इसके अतिरिक्त कई अन्य त्यौहार फूलदेई ,बसंत पंचमी, हरेला, घुघतिया इत्यादि भी है जिनमें महिलाओं द्वारा विशेष भूमिका निभाई जाती है। अधिकतर त्यौहारो में व्रत उपासना रख और सात्विक भोजन ग्रहण करना उसकी परंपरा बन गयी है। चाहे महालक्ष्मी का व्रत हो या फिर होली के पहले दिन एकादशी का व्रत जिसमें उसके द्वारा ऑवले की पूजा की जाती है या फिर तुलसी एकादशी के दिन व्रत और तुलसी की पूजा यह सभी उसके भीतर की धैर्यता और परिवार व पति की सुख समृद्वि के लिए उसके समर्पण को दर्शाते है, साथ ही साथ प्रकृति के प्रति उसके लगाव व जुड़ाव को भी महसूस कराते है। वह कठिन से कठिन

कर्मकाण्डो के द्वारा भी अपने पति व परिवार के सुख को प्राप्त करने से नही घबराती। पूर्णिमा, करवाचौथ, वट सावित्री का व्रत उसकी इसी भावना को दर्शाता है।

दीपावली मे महिलाओ द्वारा देहली व मन्दिरों पर दिये जाने वाले ऐपण उसके भीतर की कला को प्रदर्शित करते है। जो आज भी हमें प्रत्येक शुभ कार्यो में अपनी देहली व ऑगन पर उकेरे हुए मिलते है। दीपावली में ही ओखलों मे च्यूड़ कूटना और उसे आशीक रुप में रिश्तेदारों और आस–पड़ोस में बॉटना आज भी नही भूलती । शादी व्याह की रत्याली व होली में पुरुषों के कपड़े पहनकर उनकी तरह बोलचाल का लहजा अपनाकर उनकी ठिठाई लगाती है, परिहास करती है, उनकी तरह गालियॉ देती है और मन के मनोविकारो के साथ समाज मे उपस्थित कुरीतियो को अपना कथ्य बनाती है, उनमें यह कथ्य हास्य के रुप में उद्घाटित होता है । पुरुषों को महिलाओ के इस कार्यक्रम में उपस्थित होने की इजाजत नही होती। महिलॉए अपने भीतर की पीड़ा वेदना या भावनाओं को इन स्वांगो के माध्यम से सभी के समक्ष प्रस्तुत कर देती है बेखौफ और बिना शर्मिन्दगी के।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सोचा जाए तो कितना आवश्यक होता है अपने भीवर के मनोविकारों, पीड़ा को मनोरंजन के किसी माध्यम द्वारा अपने से बाहर तिरोहित करना समाज के लिए भी और व्यक्ति के लिए भी।[7] इस प्रकार से उत्तराखण्ड के त्योहारों के सौंन्दर्य मे महिलाओ का सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है। त्योहार जिनमें उल्लास, आनन्द, सहभागिता रहती है उन्हें जीवन्तता प्रदान करने का श्रेय काफी हद तक यहॉ की महिलाओं को जाता है, और सुखद बनाने का भी।

अन्त में संस्कृति के मूल भाव को बयाँ करती प्रभात उप्रेती जी की पंक्तियाँ –'संस्कृति जीवन्त है, क्रियात्मक दर्शन है। यह जीवन के आनन्द, उत्साह, दर्द की सामूहिक प्रक्रिया है। यह जीवन को मनुष्य के तर्क व आस्था के समन्वय से अर्थ देती हुई आशावादी भाव प्रकट करती है। नैराश्य या पलायन भी उसमें आ सकता है पर सर्वश्रेष्ठतम का उसका लक्ष्य होता है। जन सामान्य की सहजता ही उसकी व्यवस्था है। यह अनुभवो का अहिस्ता–अहिस्ता पकता सुस्वाद भोजन है। इसमें स्वाद है, इसलिए भोजन बनाने से लेकर दर्शन तक इसकी सहज पहुँच है। जीने के ढंग की आस्था ही इसका प्राण है। इसलिए इसकी मंद गति स्वाभाविक है, तुरन्त तीव्र गति, जल्दबाजी इसकी फितरत नहीं।[8] उत्तराखण्ड की संस्कृति ने काफी हद तक यहाँ की महिलाओ को वह समय व स्वतंत्रता दी है जिसमें उसने संस्कृति को हर पल नया सौन्दर्य प्रदान किया और आनन्द व उत्साह के साथ प्रतिष्ठापूर्ण जीवन जिया है।

सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. https://hi.m.wikipedia.org
2. कप्पीकेरे, सौ मंगल– साठोत्तरी हिंदी लेखिकाओ की कहानियो मे नारी, पृ0–8
3. सक्सेना, कौशल किशोर – कुमाऊँ कला, शिल्प और संस्कृति,1994,
4. बलूनी, दिनेश चन्द्र, –'उत्तरॉचल–संस्कृति, लोकजीवन, इतिहास एवं पुरातत्व',2001, पृ0–63
5. निवेदिता–'मध्य हिमालय का लोकधर्म (ऐतिहासिक सांस्कृतिक अध्ययन),2005,पृ0–91
6. शर्मा, डी0डी0– उत्तराखण्ड के लोकोत्सव एवं पर्वोत्सव, 2007,पृ0–2154
7. बैराठी, कृष्णा/सत्येन्द्र, कुश– कुमाऊँ की लोककला, संस्कृति और परम्परा,1992
8. उप्रेती, प्रभात कुमार–'संघर्षरत उत्तराखण्ड' – विश्व एकाधिकारवाद मे पहचान खोती क्षेत्रीयता में, 2000, पृ0–33